

नीति, प्रबंधन और स्वभाव : जीवन में गीता संस्कृति का विकास

जब नीति, प्रबंधन और स्वभाव—ये तीनों एक साथ आते हैं तो सेवा का
मार्ग सहज और सरल हो जाता है।

५ मिनट हिन्दी

गीता परिवार का NPS प्रकल्प — नीति, प्रबंधन और स्वभाव — केवल एक अध्ययन का विषय नहीं है, बल्कि जीवन जीने की उत्तम कला है। यह हमें न केवल कार्य में उत्कृष्टता देता है, बल्कि हमारे जीवन के स्वरूप को भी बदल देता है। आज की जटिल और तीव्र भागती दुनिया में यह प्रकल्प हमें सही दिशा, संतुलन और स्पष्ट दृष्टिकोण प्रदान करता है। यह आत्मविश्वास बढ़ाता है, निर्णय क्षमता को सशक्त करता है और संबंधों को मधुर बनाता है। इसलिए यह प्रकल्प हर आयु के व्यक्ति के लिए नितांत आवश्यक और जीवन को सार्थक बनाने वाला है।

नीति (Policy)

नीति का अर्थ है — *उचित समय, उचित स्थान पर उचित कार्य करना*। ऐसा व्यवहार जो स्वयं के साथ-साथ समाज के भी कल्याण का मार्ग बने। नीति हमें बताती है कि कार्य कैसे हो, ताकि वह न्यायपूर्ण और हितकारी हो।

प्रबंधन (Management)

प्रबंधन केवल संसाधनों का उपयोग नहीं, बल्कि *जीवन को व्यवस्थित करने की प्रक्रिया* है। योजना बनाना, उसे क्रियान्वित करना और नियंत्रण रखना—यह सब प्रबंधन के दायरे में आता है। प्रबंधन सिखाता है कि सीमित संसाधनों से भी बड़े उद्देश्यों को साधा जा सकता है।

स्वभाव (Character)

स्वभाव, व्यक्ति का *असली परिचय* है। इसमें करुणा, विनम्रता, सत्यनिष्ठा और प्रेमभाव की झलक मिलती है। यही स्वभाव हमें *मानवता से जोड़ता है* और हमारी पहचान समाज में मजबूत करता है।

जब नीति, प्रबंधन और स्वभाव—ये तीनों एक साथ आते हैं तो सेवा का मार्ग सहज और सरल हो जाता है। गीता परिवार का यह प्रकल्प हमें यही सिखाता है कि— नीति अपनाइए, प्रबंधन से दक्ष बनिए और स्वभाव को सात्विक रखिए। इन्हीं तीन स्तंभों पर खड़ा जीवन न केवल स्वयं को उन्नत करता है, बल्कि समाज में भी विश्वास और सद्भाव का वातावरण निर्मित करता है।

यही गीता दर्शन का वास्तविक प्रसार है—जहाँ सिद्धांत केवल पढ़े नहीं जाते, बल्कि जीवन में उतारकर जिए जाते हैं।

NPS श्रृंखला की अद्वितीय बगिया से चुने हुए पुष्प

1. गीता दृष्टि : अनुद्वेगता (शांतचित्तता)

“दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।”

आदरणीय आशू भैया जी ने अनुद्वेगता विषय पर विशेष प्रकाश डाला।
भगवद्गीता में कहा गया है कि—

- दुःख आने पर जो उद्विग्न न हो, वही स्थितप्रज्ञ मुनि है। (2.56)
- जो किसी को उद्वेग न दे और किसी से उद्वेग न पाए, वही भगवान को प्रिय है। (12.15)
- उद्वेग न करने वाली वाणी ही वाणी का तप है। (17.15)

अर्थात्, अनुद्वेगता का सीधा अर्थ है—सुख-दुःख में संतुलित रहना। यही संतुलन जीवन की सबसे बड़ी शक्ति है और यही गीता का मार्गदर्शन भी है।

1. मीठी वाणी : वाणी ही संस्कार का दर्पण

“अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् । स्वाध्यायाभ्यासनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥”

आदरणीय भैया जी बताते हैं कि वाणी हमारी आंतरिक दशा का सटीक प्रतिबिंब है।

- सत्य, प्रिय और हितकारी वाणी ही श्रेष्ठ है।
- कठोर भाषा, निंदा और अपशब्द हमारी वाणी की शक्ति को नष्ट कर देते हैं।
- वाणी एक ऐसी औषधि है जो घाव भर सकती है, और वही तलवार भी बन सकती है।

इसलिए गीता का संदेश स्पष्ट है—वाणी को साधना, स्वयं को साधने जैसा है।

1. बेहतर संस्करण : स्वयं को श्रेष्ठ बनाना

“उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् । आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥”

गीता परिवार हमें सिखाता है कि हर दिन अपने आपको बेहतर बनाना ही सच्ची साधना है।

- कठिनाइयों से भागने के बजाय उनका समाधान करना।
- लक्ष्यों को स्पष्ट रखना और प्राथमिकताओं को तय करना।
- अहंकार छोड़कर सहयोग की भावना अपनाना।
- और सबसे महत्वपूर्ण—सुनना सीखना, क्योंकि सुनना ही समझने की पहली सीढ़ी है।

1. पुरुषार्थ चतुष्टय : जीवन का आधार

“त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन । निर्वन्दो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥”

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चार पुरुषार्थ जीवन को संतुलन और दिशा देते हैं।

- धर्म जीवन का आधार है।
- अर्थ जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।
- काम जीवन को आनंद प्रदान करता है।
- मोक्ष जीवन का अंतिम लक्ष्य है।

गीता हमें सिखाती है कि धर्मयुक्त अर्थ और धर्मयुक्त कामना से ही मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होता है।

1. आलोचना : विकास का अवसर

“समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥”

आदरणीय भैया जी कहते हैं—आलोचना जीवन का दर्पण है।

- निंदक को निकट रखना हमें स्वयं को सुधारने का अवसर देता है।
- आलोचना चाहे सुननी हो या करनी, दोनों ही स्थितियों में संतुलन और सद्भाव बनाए रखना आवश्यक है।

आलोचना को अवसर मानकर ही हम स्वयं का बेहतर संस्करण बना सकते हैं।

निष्कर्ष

NPS प्रकल्प हमें यह जीवन सूत्र देता है—

नीति से सही मार्ग चुनो।

प्रबंधन से संसाधनों का सदुपयोग करो।

स्वभाव से जीवन को सुंदर बनाओ।

और जब ये तीनों हमारे जीवन में उतरते हैं, तो गीता संस्कृति सहज ही हमारे भीतर विकसित हो जाती है।

जय श्रीकृष्ण

